International Journal of Multidisciplinary Research and Development
Online ISSN: 2349-4182, Print ISSN: 2349-5979, Impact Factor: RJIF 5.72
www.allsubjectjournal.com
Volume 3; Issue 11; November 2016; Page No. 193-194

महाकवि भवभूति की दृष्टि में राम : एक विश्लेषण

डॉ0 राज पाल

एसोसिएट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग सी0आर0 किसान महाविद्यालय, जीन्द, हरयाणा, भारत

प्रस्तावना

रामकथा आधारित दृश्यकाव्यकारों में महाकवि भवभूति एक आदर्शोन्मुखी नाटककार थे । भारतीय समाज में ''रामादिवत् वर्तितव्यं न रावणादिवत् तथा यथा हि राजा कुरुते प्रजास्तमनुवर्तते', की अवधारणा रही है । भवभूति कालीन समाज एक वीरयुगीन राजसत्तात्मक समाज था । इसलिए लोकाराधना एवं प्रजा–रक्षण रुपी जीवन–मूल्य को ही तत्कालीन समाज में आदर्श रुप समझा जाता था । राजा की लोकाराधना रुपी प्रतिज्ञा धर्मशास्त्र एवं नीतिशास्त्र सम्मत् होती थी । मनु ने लोकाराधनारत राजा की स्थिति व भूमिका पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि 'राजा दण्ड–प्रयोक्ता होता है और व्यक्ति दण्ड–प्रयोग के योग्य । भवभूति को राम के 'पुरातन अथवा अतीत' होने का बहुत लाभ मिला । वह वाल्मीकि की तरह राम के समयुगीन नहीं थे । कलियुग के संस्कृत कवि भवभूति को त्रेतायुगीन राम का चरित प्रख्यापित करना था । उत्तररामचरित में भवभूति ने केवल एक चरित को गढ़ने में अपनी सारी काव्य प्रतिभा को दाँव पर लगा दिया । इस दृष्टि में हम कह सकते हैं कि 'रामान्तं भवभूति कवित्वम्'' ।

सारा प्रतिभा कोष राम को ही गढ़ने में खर्च कर देने का परिणाम यह हुआ कि भवभूति के राम अपने अन्य अनेक अतीत अनागत प्रतिबिम्बों से सर्वथा पृथक एवं विलक्षण सिद्ध होते हैं । वाल्मीकि ने राम का सम्पूर्ण जीवन देखा है रामायाण में, परन्तु भवभूति की दृष्टि केन्द्रित है मात्र 'उत्तररामचरित'' पर । वाल्मीकि के राम के अनेक रुप हैं जीवन के उतर चढ़ाव में । वह जनमानस में बसा एक सुदर्शन राजकुमार है । वह राज्याभिषेक के सौभाग्य से श्री मण्डित एक भावी नरेश है तो दूसरे ही क्षण राज्यभ्रष्ट वनवासी भी । परन्तु भवभूति के राम का केवल एक रुप है और वह है प्रजानुरुंजनलीन राजा होने का । भवभूति ने भी उपयुक्त समस्त मानवीय संवेदनाओं की चरितार्थता अपने राम में दिखाई है – परन्तु समूचे राम में नहीं प्रत्युत राजा राम में, अयोध्या नरेश राम में ।

वाल्मीकि के राम को पिता का 'सत्य' प्रिय है उसकी रक्षा के लिए वह 'वनवास' तो क्या 'प्राणत्याग' भी स्वीकार कर सकते हैं 1। राम भरत के लिए सर्वस्व त्याग करने को उद्यत हैं 2। इस प्रकार वाल्मीकि के राम के समक्ष अनेक विकल्प हैं । इसके विपरीत, भवभूति के राम के समक्ष मात्र एक ही महान् लक्ष्य है और वह है – लोक का अराधन, प्रजा का अनुरंजन । वह बड़ी स्पष्टता से घोषित करते हैं –

> स्नेहं दयां च सौख्यंच यदि वा जानकीमपि ।
> अराधनाय लोकस्य मुंचतो नास्ति में व्यथा 3।।

जिस सीमा के विषय में उसकी यह अनुभूति थी कि ''किमस्या न प्रेयो यदि परमसह्यस्तु विरहः'' उसी प्राण सहचरी सीता को राम ने लोकाराधन मात्रा के लिए त्याग दिया – आजीवन मनोयंत्रणा के मूल्य पर । परन्तु उनके मुँह से सीता त्याग की प्राणदाही व्यथा की 'उफ' तक नहीं निकली ।

> अनिर्भिन्नो गंभीरत्वादन्तर्गूढ़ धनव्यथ : ।।
> पुतपाकप्रतीकाशो रामस्य करुणो रसः ।।

राम की व्यथा का यही पक्ष उन्हें कविकल्पित अन्य सैकड़ों रामप्रतिबिम्बों से अलग कर देता है । ऐसी मर्मान्तक पीड़ा जो सही न जा सके । परन्तु विवशता भी ऐसी की उस पीड़ा को व्यक्त नहीं करना है, क्योंकि वह पीड़ा राम नामक किसी साधारण नागरिक की नहीं, वह पीड़ा तो उस 'राम' की है जो अयोध्या नरेश है । पत्नी परित्याग की हृदयदाही यंत्रणा भी वह अपने या भार्या के किसी अपराध के कारण नहीं – मात्र प्रजा के अराधनार्थ भोग रहा है । एक सहृदय पति के रुप में राम सीता की निष्कलुषता को अच्छी तरह जानते 4 और अनुभव करते हैं 5। वह तो उसे तीर्थ जल एवं अग्नि के समान पवित्र मानते हैं 6।

उत्तररामचरित में वर्णित राम के आदर्शों को यदि आज के राजनेता अपना लें तो निःसन्देह भ्रष्टाचार पर अंकुश लग सकता है । सामाजिक असमानताएँ, धर्मान्धता, आर्थिक लाभ के लिए मर्यादा का उल्लंघन आदि अनेक समस्याएँ जो दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं उन पर अंकुश लग सकता है । भवभूति ने यह सिद्ध कर दिया है कि एक राजा का प्रथम कर्त्तव्य प्रजानुरंजन है ।

प्रिया वियोग से भी बड़ी भयावह परीक्षा है राम के लिए, और वह है – हृदयहीन प्रजा अथवा समाज के ही रंग में ढ़लकर सीता के लिए रोना – कल्पना नहीं । अन्यथा लोकपुनः कह सकता है कि यदि पत्नी के लिए इतना प्रेम था तो त्याग ही क्यों ? राम इस चुनौती को भी स्वीकार करते हैं । असीम धैर्य, साहस, औदात्त्य एवं मनोनिग्रह के साथ इस पीड़ा को सहते हैं – अयोध्या में प्रजाजनों के बीच । परन्तु दण्डकारण्य के जनशून्य एकान्त में पहुँचते ही उनका धैर्य का कृत्रिम बाँध टूट जाता है और वह कातर स्वर में, प्राणप्रिया भार्या के लिए विलाप करने लगते हैं – ऐसा विलाप जो दण्डकवन को भी रुला देता है, जो वज्र के हृदय को भी विद्वेलित कर देता है ।7 जो राम प्रजाराधक के रुप में अभी तक धैर्य–संयम का कंचुक ओढ़े मौन थे, वही भार्या विरहित एक साधरण जन की तरह अब प्रजाजनों को उपालम्भ देते हुए फूट पड़ते हैं क्योंकि यहाँ जीवन का अभिनव ही नहीं, प्रत्युत जीवन का यथार्थ है –

> दलति हृदयं शोकोद्विगाद् द्विधतु न भिद्येत्
> वहति विकलः कायो मोहं न मुंचति चेतनाम् ।।8

उस राम कथा ने वाल्मीकीय रामकथा को तो लोकप्रियता में पीछे छोड़ ही दिया, साहित्य शास्त्रीय स्तर पर भी श्रृंगार को रस राजत्व से वंचित कर तथा ''एको रसः करुण एव'' की उद्घोषणा कर आचार्यों तथा सहृदयों को स्तम्भित कर दिया ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि महाकवि भवभूति ने राम के दिव्य भावात्मक और हृदय–ग्राही चित्र प्रस्तुत किया है । भवभूति का राम

आदर्श शासक, आदर्शमित्र, आदर्श शत्रु एवं आदर्श भावुक भी थे । वास्तविकता यह है कि राम का उदार चरित्र चित्रण करने में भवभूति ने अपना अद्वितीय बुद्धि–वैभव प्रदर्शित किया है । भवभूति साहित्य पर रामायण कालीन सभ्यता एवं समाज का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है । भवभूति का समाज एक आदर्श समाज है जिसमें पूर्ण रुपेण मर्यादा का पालन किया गया है । कहीं भी उपेक्षा का भाव दृष्टिगोचर नहीं होता है । समाज में राम राज्य की विशेषता का आभास होता है । प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्त्तव्य के प्रति सजग और धर्म के प्रति जागरुक एवं आस्थावान दिखाई देता है । प्रेम के सम्बन्ध में भवभूति का आदर्श अत्युच्च और महान है । भवभूति ने जिस दाम्पत्य प्रणय का चित्रण किया है, वह दुग्ध के समान धवल और गंगा के समान पवित्र है, जिसकी परिणति संतान प्राप्ति में है, जो पति और पत्नी के स्नेहासिक्त ह्रदयों को एक सूत्र में बाँधनेवाली आनन्दमयी ग्रन्थि है । राम और सीता के परस्पर प्रेम को भवभूति ने प्रीति की संज्ञा दी है जो एक दूसरे के गुणों और परस्पर सम्पर्क से पल्लवित एवं पुष्पित होती है ।

सन्दर्भ

1. अहं हि सीतां राज्यं च प्राणानिष्ठान धनानि च ।
   हृष्टो भ्रात्रे स्वयं दद्यां भरताय प्रचोदित ः ।।
   रामायण, अयोध्या, 19.7
2. धर्मो हि परमो लोके धर्मे सत्यं प्रतिष्ठितम् ।
   धर्मसंश्रितमप्येतत् पितुर्वचनमुत्तमम् ।।
   रामायण, अयोध्या, 21.41
3. उत्तररामचरित, 1.12
4. हा देवि देवयजनसम्भवे । ....कथमेवं विद्याया–स्तवायमीदृशः परिणामः ।
   उत्तररामचरित, अंक 1 ।
5. शैशवात्प्रभृति पोषितां प्रियां सौहृदादपृथगाश्रयामिमाम् ।
   छद्मना परिददामि मृत्यवे शौनिके गृहशकुत्तिकामिव ।।
   उत्तररामचरित, 1.45
6. उत्पत्ति परिपूतायाः किमस्याः पावनान्तरैः ।।
   तीर्थोदक×च वह्निश्च नान्यतः शुद्विमर्हतः ।।
   वही, 1.13
7. जनस्थाने शून्ये विकलकरणैर्रामचरितैरपि ग्रावां रोदित्यपि दलति वज्रस्य ह्रदयम् ।।
   उत्तररामचरितम् 1.28
8. वही, 3.32